अपीलीय सिविल

जे. आर. एस. नरूला के समक्ष

तारा चंद, - अपीलकर्ता।

बनाम

रैम अवतार, बीटीसी, - उत्तरदाता।

1963 का आर.एस.ए. नंबर 1103।

19 फरवरी, 1974।

हिंदू दत्तक और भरण-पोषण अधिनियम (1956 का 78) - धारा 13 और 30 - अधिनियम के लागू होने से पहले किए गए दत्तक ग्रहण - धारा 13 - क्या उस पर लागू होता है - रिवाज द्वारा शासित पार्टियां - क्या हिंदू कानून के तहत औपचारिक गोद लिया जा सकता है।

यह अभिनिर्धारित किया गया कि हिंदू दत्तक और भरण-पोषण अधिनियम, 1956 की पूरी योजना ऐसी है कि अधिनियम के लागू होने से पहले किए गए दत्तक ग्रहण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, सिवाय किसी ऐसे मामले के जिसके लिए इसके विपरीत निश्चित प्रावधान किए गए हैं। अधिनियम की योजना से आंका गया है कि धारा 13 के प्रावधानों का उद्देश्य केवल उन दत्तक ग्रहणों पर लागू होना है जिन्हें धारा 5 में संदर्भित किया गया है और धारा 13 में "गोद लेना" शब्द धारा 5 की उप-धारा 1 में उल्लिखित दत्तक ग्रहण के लिए संदर्भित है। भले ही व्याख्या की प्रक्रिया द्वारा धारा 13 के दायरे को अधिनियम के बाद गोद लेने तक सीमित करने में कुछ संदेह हो, लेकिन अधिनियम की धारा 30 के स्पष्ट प्रावधानों द्वारा संदेह को दूर कर दिया जाता है। इसलिए जहां अधिनियम के प्रवर्तन से पहले गोद लेने का प्रभाव अधिनियम के प्रवर्तन से पहले किया जाता है, सभी उद्देश्यों के लिए गोद लेने का प्रभाव अधिनियम और धारा 13 के प्रावधानों से स्वतंत्र रूप से निर्धारित किया जाना चाहिए और धारा 13 के प्रावधान उस पर लागू नहीं होते।

यह अभिनिर्धारित किया गया कि यदि पार्टियां रिवाज द्वारा शासित होती हैं

तो वे औपचारिक गोद ले सकती हैं। इस तरह के गोद लेने का प्रभाव हिंदू कानून के तहत होता है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि पार्टियां हिंदू कानून द्वारा शासित हैं या गोद लेने का काम उस कानून के तहत किया जाता है। श्री सुखदेव सिंह सिद्धू, अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, मोहिंदरगढ़ (कैंप नारनौल) की 9 अप्रैल, 1963 की डिक्री से नियमित सेकंड अपील, जिसमें श्री पीसी सैनी, उप न्यायाधीश प्रथम श्रेणी, मोहिंदरगढ़, के दिनांक 30 मार्च, 1962 के आदेश को संशोधित किया गया है (वादी के मुकदमे को खारिज कर दिया गया है और पक्षकारों को अपनी लागत वहन करने के लिए छोड़ दिया गया है) इस हद तक कि वादी को इस इस आशय की घोषणा के लिए एक डिक्री कि विवादित उपहार शून्य है और प्रभु दाता-प्रतिवादी की मृत्यु के बाद उपहार में दी गई संपत्ति में वादी के प्रत्यावर्ती अधिकारों को प्रभावित नहीं करेगा और दूसरी राहत के बारे में वादी के मुकदमे को खारिज कर देगा यानी, निरंतर निषेधाज्ञा के लिए और पार्टियों को अपनी लागत वहन करने के लिए छोड़ देगा।

रूप चंद, एडवोकेट, अपीलकर्ता के लिए।

जे. वी. गुप्ता, एडवोकेट, उत्तरदाताओं के लिए।

निर्णय

नरूला, जे - राम औतार नाबालिग वादी, प्रभु, प्रतिवादी के दत्तक पुत्र, ने 15 अप्रैल, 1961 को मुकदमा दायर किया; इस आशय की घोषणा के लिए कि अहीर होने के नाते पक्ष एक कृषि जनजाति से संबंधित हैं और गोद लेने के मामलों में प्रथागत कानून द्वारा शासित होते हैं, जिसके अनुसार एक निस्संतान मालिक अपने संपार्श्विक में से किसी को गोद ले सकता है और ऐसे दत्तक पुत्र की उपस्थिति में, दत्तक पिता प्रतिफल और कानूनी आवश्यकता के अलावा अपनी पैतृक संपत्ति का निपटान करने के लिए सक्षम नहीं है, और उक्त प्रथा के मद्देनजर उसके दत्तक पिता प्रभु प्रतिवादी खाली भूमि का उपहार देने के लिए सक्षम नहीं थे, जिस पर कुछ कोठियाँ और हवेली थी, जो पैतृक संपत्ति थी। इस आधार पर उन्होंने 10 मार्च, 1961 को अपने भाई तारा चंद प्रतिवादी-अपीलकर्ता के पक्ष में प्रभु प्रतिवादी द्वारा दिए गए उपहार की बाध्यकारी प्रकृति को चुनौती दी। वादी-प्रतिवादी ने यह दावा करते हुए कि यह उपहार अमान्य है, और इसलिए, दत्तक

पिता की मृत्यु के बाद उनके प्रत्यावर्ती अधिकारों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, प्रभु को उनकी शेष पैतृक संपत्ति का निपटान करने से रोकने के लिए एक डिक्री की भी मांग की।

(2) इस मुकदमे को दानकर्ता के साथ-साथ ग्रहीता ने भी चुनौती दी थी। पक्षकारों की दलीलों से ट्रायल कोर्ट ने निम्नलिखित सात मुद्दे तैयार किए –

(1) "क्या वादी, प्रभु प्रतिवादी का दत्तक पुत्र है, और इस तरह उसका प्रत्यावर्तनकर्ता है?

(2) क्या वाद की संपत्ति वादी के लिए पैतृक है?

(3) क्या पार्टियां प्रथा द्वारा शासित होती हैं, यदि हां, तो अलगाव और उत्तराधिकार के मामले में वह प्रथा क्या है?

(4) क्या विचाराधीन उपहार मान्य है?

(5) क्या वादपत्र कार्रवाई के किसी कारण का खुलासा नहीं करता है?

(6) क्या वादी उस निषेधाज्ञा का हकदार है जिसके लिए प्रार्थना की गई है?

(7) राहत."

30 मार्च, 1962 के फैसले में, ट्रायल कोर्ट ने वादी-प्रतिवादी के मुकदमे को इस आधार पर खारिज कर दिया कि वादी को अलगाव को चुनौती देने का कोई अधिकार नहीं था क्योंकि वह एक प्रथागत गोद लेने वाला था जो केवल एक उत्तराधिकारी की नियुक्ति के समान था, जो दत्तक पिता और दत्तक पुत्र के बीच व्यक्तिगत संबंध बनाता था, नियुक्त उत्तराधिकारी और दत्तक पिता के संपार्श्विक के बीच रिश्तेदारी का कोई बंधन नहीं था। अन्य मुद्दों पर ट्रायल कोर्ट ने पाया कि वादी को प्रथा के तहत वैध रूप से अपनाया गया था, लेकिन उसकी स्थिति हिंदू कानून के तहत गोद लिए गए बेटे से अलग थी; कि सूट भूमि पैतृक थी, लेकिन उसी पर निर्माण गैर-पैतृक थे; कि पार्टियां रिवाज द्वारा शासित थीं; कि उपहार अन्यथा मान्य था; लेकिन निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा सुनवाई योग्य नहीं था। ट्रायल कोर्ट की डिक्री के खिलाफ वादी-प्रतिवादी की अपील को 9 अप्रैल, 1963 को श्री सुखदेव सिंह सिद्धू, अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, मोहिंदरगढ़ की अदालत के फैसले द्वारा अनुमति दी गई थी। विद्वान न्यायाधीश ने दो मामलों को छोड़कर

ट्रायल कोर्ट के सभी निष्कर्षों की पुष्टि की; अर्थात् (i) भूखंड पर निर्माण की पैतृक प्रकृति के बारे में; और (ii) पार्टियों के रीति-रिवाजों द्वारा शासित होने के बावजूद वादी को औपचारिक रूप से गोद लेने के प्रभाव के बारे में। मुद्दा संख्या 2 पर निचली अपीलीय अदालत ने कहा कि कानून के मद्देनजर *सुचेत सिंह और अन्य बनाम बांका और अन्य (1)* पैतृक भूमि पर बने घर केवल भूमि के सहायक थे और पैतृक थे, और इसलिए, पूरी सूट संपत्ति पैतृक थी। मुद्दों संख्या 1 और 3 पर निष्कर्ष इस हद तक भिन्न थे कि हालांकि पार्टियों को निश्चित रूप से रिवाज द्वारा

(1)90 पी.आर. 1891

शासित किया गया था जिस क्षेत्र से वे संबंधित थे, वह पुरानी दिल्ली का क्षेत्र था, जिसमें प्रथागत कानून के तहत कृषि जनजातियों के बीच गोद लेना केवल एक उत्तराधिकारी की प्रथागत नियुक्ति नहीं थी जैसा कि पंजाब के बाकी हिस्सों में समझा जाता है। लेकिन पूर्ण और औपचारिक गोद लेने का हिंदू कानून के समान प्रभाव था, और इसलिए, वादी-प्रतिवादी ने अपने प्राकृतिक परिवार के साथ अपने सभी संबंध खो दिए थे, और नए परिवार के साथ विलय करने के बाद वह अपने दत्तक पिता के परिवार में संपार्श्विक रूप से सफल होने का हकदार था क्योंकि सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए वादी प्रभु के पिता का पोता बन गया था।

(3) तारा चंद दानी-प्रतिवादी द्वारा दायर की गई इस दूसरी अपील में, चौधरी रूप चंद ने केवल दो बिंदुओं पर जोर दिया है। उन्होंने पहले कहा है कि जिस मुकदमे से यह अपील उत्पन्न हुई है, उसे हिंदू दत्तक ग्रहण और भरण-पोषण अधिनियम (1956 का 78) की धारा 13 के तहत प्रतिबंधित माना जाना चाहिए था। उनका तर्क यह है कि जैसा कि अधिनियम की धारा 4 अन्य बातों के साथ-साथ यह निर्देश देती है कि अधिनियम में स्पष्ट रूप से प्रदान किए गए प्रावधान के अलावा, अधिनियम के प्रारंभ होने से ठीक पहले लागू उस कानून के हिस्से के रूप में हिंदू कानून का कोई पाठ, नियम या व्याख्या या कोई भी रिवाज या उपयोग किसी भी मामले के संबंध में प्रभावी नहीं होगा, जिसके लिए अधिनियम में प्रावधान किया गया है, इस अधिनियम के प्रावधानों में कानून के बल वाले किसी अन्य कानून या उपयोग को निरस्त करने या ओवरराइड करने का प्रभाव है। इसके बाद उन्होंने तर्क दिया कि चूंकि अधिनियम की धारा 13 दत्तक पिता को अपनी

संपत्ति को अंतर-जीवित स्थानांतरण या वसीयत द्वारा निपटाने की शक्ति प्रदान करती है, इसके विपरीत किसी भी प्रथागत गोद लेने के प्रभाव को धारा 13 द्वारा निरस्त कर दिया जाता है। उस खंड में लिखा है:-

> "इसके विपरीत किसी भी समझौते के अधीन, गोद लेने से दत्तक पिता या माता को अपनी संपत्ति को अंतर-मौखिक या इच्छा से स्थानांतरित करने की शक्ति से वंचित नहीं किया जाता है।

वकील ने *श्रीमती बंसो और अन्य चरण सिंह और अन्य (2),* के मामले में इस न्यायालय की एक खंडपीठ के निर्णय का उल्लेख किया है इस प्रस्ताव के समर्थन में कि अधिनियम की धारा 4 का अभिभावी प्रभाव है। *श्रीमती बंसो और अन्य (सुप्रा)* के मामले में, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम (1956 का 30) की धारा 4 की व्याख्या पंजाब प्रथागत कानून के तहत उत्तराधिकार के नियमों के खिलाफ ओवरराइड प्रभाव देने के लिए की गई थी "उन मामलों में जहां उत्तराधिकार उस अधिनियम के लागू होने के बाद खुलता है"। अधिनियम की धारा 4 के अर्थ, प्रभाव और दायरे की व्याख्या करने में कोई कठिनाई नहीं है। तथापि, अधिनियम के उपबंधों को पढ़ने पर मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि अधिनियम की संपूर्ण योजना ऐसी है जिसका अधिनियम के लागू होने से पूर्व किए गए दत्तक ग्रहण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, सिवाय किसी ऐसे मामले के जिसके लिए इसके विपरीत निश्चित प्रावधान किए गए हैं। अधिनियम का अध्याय ॥ दत्तक ग्रहण से संबंधित है। धारा 5 जो दत्तक ग्रहण को नियंत्रित करती है, स्पष्ट रूप से अधिनियम

(2) 1960 पी.एल.आर. 865

के प्रारंभ के बाद किए गए दत्तक ग्रहण को संदर्भित करती है। धारा 6 में वैध दत्तक ग्रहण की आवश्यकताएं शामिल हैं, धारा 7 एक पुरुष हिंदू की गोद लेने की क्षमता का उल्लेख करती है, धारा 8 एक महिला हिंदू की गोद लेने की क्षमता से संबंधित है, धारा 9 जो गोद लेने में सक्षम व्यक्तियों की गणना करती है, धारा 10 जिसमें गोद लिए जाने वाले व्यक्तियों की सूची होती है, धारा 11 जो वैध गोद लेने के लिए अन्य शर्तें प्रदान करती है, और धारा 12 जिसमें गोद लेने का प्रभाव शामिल है, मुझे केवल ऐसे दत्तक ग्रहण से निपटने के लिए प्रतीत होता है जैसा कि धारा 5 में संदर्भित किया गया है। अधिनियम के लागू होने के बाद गोद लिया

गया है। अधिनियम की इस योजना से यह पता चलता है कि धारा 13 के प्रावधान भी केवल उन दत्तक ग्रहणों पर लागू होते हैं जिन्हें धारा 5 में संदर्भित किया गया है। धारा 13 में "गोद लेना" शब्द धारा 5 की उप-धारा (1) में उल्लिखित दत्तक ग्रहण को संदर्भित करता है। भले ही धारा 13 के दायरे को व्याख्या की प्रक्रिया द्वारा अधिनियम के बाद गोद लेने तक सीमित करने में कुछ संदेह हो सकता है, लेकिन ऐसा लगता है कि अधिनियम की धारा 30 के स्पष्ट प्रावधान से संदेह दूर हो गया है। यह खंड निम्नलिखित शब्दों में है:-

> "इस अधिनियम में निहित कुछ भी इस अधिनियम के लागू होने से पहले किए गए किसी भी दत्तक ग्रहण को प्रभावित नहीं करेगा, और इस तरह के किसी भी गोद लेने की वैधता और प्रभाव को इस तरह से निर्धारित किया जाएगा जैसे कि यह अधिनियम पारित नहीं किया गया था।

चौधरी रूप चंद मुझसे प्रभु द्वारा राम औतार को अपनाने के प्रभाव के बारे में फैसला करने के लिए कह रहे हैं, जो तारा चंद के पक्ष में प्रभु द्वारा किए गए हस्तांतरण को चुनौती देने के उनके अधिकार के बारे में है। उस मामले पर निर्णय लेने के लिए, धारा 30 में उल्लिखित बातों के मद्देनजर अधिनियम के प्रावधानों को नहीं देखा जा सकता है। यह दोनों पक्षों का सामान्य मामला है कि राम औतार प्रतिवादी को प्रभु प्रतिवादी द्वारा गोद लिया गया था, इससे पहले कि प्रभु ने 4 फरवरी, 1955 को गोद लेने वाले विलेख प्रदर्शनी पीए को निष्पादित किया था। यह अधिनियम दिसम्बर, 1956 में लागू हुआ। चूंकि राम औतार को अधिनियम से पहले अपनाया गया था, इसलिए सभी उद्देश्यों के लिए उसे गोद लेने का प्रभाव अधिनियम से स्वतंत्र रूप से निर्धारित किया जाना चाहिए, और इसलिए, अधिनियम की धारा 13 के प्रावधान तारा चंद अपीलकर्ता के लिए किसी भी लाभ का नहीं हो सकते हैं। इसलिए चौधरी रूप चंद की पहली दलील विफल हो जाती है।

(4) अपीलकर्ता के विद्वान वकील द्वारा प्रस्तुत एकमात्र अन्य तर्क यह है कि यदि राम औतार को गोद लेने का हिंदू कानून के तहत औपचारिक गोद लेने के समान प्रभाव माना जाता है, तो तैयार किया गया मुकदमा सुनवाई योग्य नहीं था और वादी-प्रतिवादी को तब अपने दत्तक पिता के साथ संयुक्त कब्जे के लिए

मुकदमा दायर करना चाहिए था, न कि घोषणा के लिए। यह विवाद एक से अधिक कारणों से विफल होना चाहिए। सबसे पहले अपीलकर्ता द्वारा अपने लिखित बयान में ऐसी कोई दलील नहीं दी गई थी और उस संबंध में किसी मुद्दे का दावा नहीं किया गया था। दूसरा, जैसा कि तैयार किया गया मुकदमा अपीलकर्ता

के लिए उस मुकदमे की तुलना में अधिक फायदेमंद है, जो अपीलकर्ता के अनुसार, वादी द्वारा दायर किया जाना चाहिए था। तीसरी बात, यह किसी का मामला नहीं है कि पार्टियां हिंदू, कानून द्वारा शासित होती हैं। दोनों न्यायालयों का समवर्ती निष्कर्ष, जिसकी यथार्थता पर मेरे समक्ष कोई विवाद नहीं हुआ है, यह है कि पक्षकारों को रीति-रिवाजों द्वारा शासित किया जाता है। निचली अपीलीय अदालत का एकमात्र निष्कर्ष जिस पर फिर से विवाद नहीं हुआ है, वह यह है कि हालांकि पक्षकार रीति-रिवाजों द्वारा शासित होते हैं, लेकिन मोहिंदरगढ़ जिले सहित पूर्ववर्ती दिल्ली क्षेत्र में प्रचलित प्रथा के अनुसार गोद लेने का प्रभाव हिंदू कानून के तहत औपचारिक गोद लेने का था। गोद लेने का प्रभाव हिंदू कानून के तहत एक औपचारिक कानून का है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि पार्टियां हिंदू कानून द्वारा शासित थीं, या उस कानून के तहत दत्तक ग्रहण दिया गया था। यह स्थापित कानून है कि भले ही पार्टियां प्रथा द्वारा शासित हों, वे औपचारिक रूप से गोद ले सकते हैं। यह *केहर सिंह और अन्य बनाम दीवान सिंह और अन्य (3)* मामले में तय किया गया है। इन परिस्थितियों में, मुकदमे के फ्रेम के साथ कोई गलती नहीं पाई जा सकती है।

(5) चौधरी रूप चंद ने इस अपील में कोई अन्य दलील नहीं दी। उनकी दोनों दलीलें विफल होने के बाद, अपील सफल नहीं हो सकती है और तदनुसार इसे खारिज कर दिया जाता है, हालांकि लागत के रूप में कोई आदेश नहीं दिया जाता है। '

(3) ए.आई.आर. 1966 एस.सी. 1555

के.एस.के.

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

आशिमा गर्ग

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

गुरूग्राम, हरियाणा